**राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ**

खंडपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 4075/2023

श्रीमती चंपा देवी, पत्नी दिवंगत पूर्व सिपाही, अंजी सिंह नंबर 2643511, उम्र लगभग 83 वर्ष, निवासी ग्राम रामपुरा बेरी, पोस्ट रामपुर बेरी, तहसील-चिड़ावा, जिला झुंझुनू।

**----याचिकाकर्ता**

**बनाम**

1. भारत संघ, सचिव जरिये, रक्षा मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली के माध्यम से।
2. पीसीडीए (पी), इलाहाबाद (यू.पी.)
3. वरिष्ठ रिकार्ड अधिकारी, ओआईसी रिकार्ड, द ग्रेनेडियर्स जबलपुर (एम.पी.)

**----प्रत्यर्थीगण**

| | | |
|---|---|---|
| याचिकाकर्ता (गण) की ओर से | : | श्री राजेश गढ़वाल |
| प्रत्यर्थी (गण) की ओर से | : | श्री देवेश कुमार बंसल |

**माननीय कार्यवाहक मुख्य न्यायाधीश मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव**

**माननीय न्यायमूर्ति अनिल कुमार उपमन**

**निर्णय**

**25/05/2023 (प्रति माननीय अनिल कुमार उपमन, न्यायमूर्ति)**

**रिपोर्टेबल**

सुनवाई की गई।

उपरोक्त रिट याचिका सशस्त्र बल न्यायाधिकरण, क्षेत्रीय पीठ, जयपुर (बाद में संक्षिप्तता के लिए 'न्यायाधिकरण' के रूप में संदर्भित) द्वारा पारित आदेश दिनांक 28.11.2022 को चुनौती देते हुए दायर की गई है, जिसके तहत याचिकाकर्ता द्वारा दायर मूल आवेदन (संख्या 81/2011) को ख़ारिज किया गया है।

मामले के संक्षिप्त तथ्य यह है कि याचिकाकर्ता द्वारा धारा के तहत एक आवेदन सशस्त्र बल न्यायाधिकरण अधिनियम, 2007 की धारा 14 दायर की गई थी जिसमें यह प्रार्थना की गई थी कि प्रत्यर्थीगण को उनके पति स्वर्गीय पूर्व सिपाही अंजी सिंह के जीवनकाल के लिए 30.09.1963 से 04.08.1966 तक परिणामी लाभों के साथ सेवा पेंशन

और उसके बाद पारिवारिक पेंशन देने का निर्देश दिया जाए। आवेदन में, याचिकाकर्ता ने कहा था कि उनके पति 05.05.1960 को सेना में भर्ती हुए थे और तीन साल से अधिक की सेवा देने के बाद, उन्हें सेवा में आगे बनाए रखने के लिए चिकित्सकीय रूप से अयोग्य पाया गया और परिणामस्वरूप 30.09.1963 को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। सेना नियम 13 (3) III (iii) के तहत। याचिकाकर्ता ने आगे कहा कि नामांकन के समय, उसका पति शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ था, लेकिन बाद में, सेवा के दौरान वह विकलांगता से पीड़ित हो गया और परिणामस्वरूप उसे चिकित्सा आधार पर सेवा से छुट्टी दे दी गई। इन परिस्थितियों में, उनके पति सेवा पेंशन और विकलांगता पेंशन के अनुदान के लिए पात्र थे और उनकी मृत्यु के बाद, वह पारिवारिक पेंशन के अनुदान के लिए पात्र हैं। उपरोक्त राहत के लिए याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी से संपर्क किया और उसके अधिवक्ता के माध्यम से कानूनी नोटिस भी भेजा गया लेकिन याचिकाकर्ता की शिकायतों पर प्रत्यर्थीगण द्वारा कोई ध्यान नहीं दिया गया। इन परिस्थितियों में, याचिकाकर्ता के पास अपनी शिकायतों के निवारण के लिए न्यायाधिकरण से संपर्क करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था।

आवेदन का विस्तृत उत्तर प्रत्यर्थीगण द्वारा प्रस्तुत किया गया था जिसमें यह कहा गया था कि दिवंगत पूर्व सिपाही अंजी सिंह के सेवा दस्तावेज अनिवार्य प्रतिधारण अवधि की समाप्ति के बाद नष्ट कर दिए गए हैं। हालाँकि, लॉन्ग रोल के अनुसार, दिवंगत पूर्व सिपाही अंजी सिंह को 30.09.1963 को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था और लॉन्ग रोल के अन्य कॉलम, जिन्हें भरना आवश्यक था, खाली हैं। प्रत्यर्थीगण ने आगे कहा कि दिवंगत पूर्व सिपाही अंजी सिंह ने 15 साल की न्यूनतम योग्यता सेवा पूरी नहीं की है, इसलिए, वह सेवा पेंशन के पात्र नहीं थे। वह अमान्य पेंशन के अनुदान के लिए भी पात्र नहीं था क्योंकि उसने सेना के लिए पेंशन विनियम, 1961 (भाग-1) के नियम 198 के अनुसार न्यूनतम 10 वर्ष की सेवा पूरी नहीं की है। यह भी कहा गया कि विकलांगता पेंशन उन सशस्त्र बल कर्मियों को दी जाती है, जिन्हें विकलांगता के कारण सेवामुक्त/अमान्य कर दिया जाता है, जिसका मूल्यांकन 20% से अधिक होता है और जिसे सैन्य सेवा के कारण माना जाता है या बढ़ी हुई माना जाता है। अंत में, प्रत्यर्थीगण द्वारा यह प्रार्थना की गई कि याचिकाकर्ता का पति पेंशन अनुदान के लिए उपरोक्त किसी भी श्रेणी में नहीं आता है और इसलिए, याचिकाकर्ता द्वारा दायर मूल आवेदन खारिज किया

जाने योग्य है।

याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का कहना है कि विद्वान न्यायाधिकरण ने याचिकाकर्ता के दावे को खारिज करने में गंभीर अवैधता की है और अधिकरण ने याचिकाकर्ता के मामले पर सही परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया है और मनमाने तरीके से याचिकाकर्ता के दावे को खारिज कर दिया है। उन्होंने आगे कहा कि समान तथ्य की स्थिति में, अन्य व्यक्ति को भी वही लाभ दिया गया है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:-

1. भारत संघ एवं अन्य बनाम राजबीर सिंह: 2015 (12) एससीसी 264
2. धर्मवीर सिंह बनाम यूओआई: 2013 (7) एससीसी 316
3. यूनियन ऑफ इंडिया बनाम अंगद सिंह टिटारिया: 2015 (12) एससीसी 257
4. वीर पाल सिंह बनाम सचिव, रक्षा मंत्रालय: 2013(10) एससीआर 579 एवं
5. यूनियन ऑफ इंडिया बनाम मंजीत सिंह: 2015 (12) एससीसी 275

इसके विपरीत, प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया और प्रस्तुत किया कि मामले के प्रत्येक पहलू पर विचार करने के बाद, विद्वान न्यायाधिकरण ने आक्षेपित आदेश पारित किया है। इस प्रकार, उन्होंने रिट याचिका को खारिज करने की मांग की।

हमने पक्षों के अधिवक्ता द्वारा दी गई दलीलों पर विचारपूर्वक विचार किया है और रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया है।

रिकॉर्ड के अवलोकन से, ऐसा प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता के पति का मृत्यु प्रमाणपत्र 20.05.2005 को जारी किया गया था, लेकिन इसे मूल आवेदन के साथ प्रस्तुत नहीं किया गया था, जो कि न्यायाधिकरण के समक्ष वर्ष 2011 में देर से दायर किया गया था। हम आगे पाते हैं कि याचिकाकर्ता ने अपने पति की मृत्यु के चार दशक से अधिक समय के बाद न्यायाधिकरण से संपर्क किया और इस तरह की अत्यधिक/अस्पष्ट देरी के लिए, याचिकाकर्ता द्वारा कोई उचित या पर्याप्त कारण नहीं दिखाया गया। न्यायाधिकरण के समक्ष दायर सीमा अधिनियम की धारा 5 के तहत आवेदन में कोई ठोस कारण नहीं है और यह सामान्य और अस्पष्ट आधार पर दायर किया गया था। हमने आगे पाया कि याचिकाकर्ता न्यायाधिकरण के समक्ष कोई भी दस्तावेज पेश करने में विफल रहा जो इस तथ्य को साबित करता हो कि याचिकाकर्ता दिवंगत पूर्व सिपाही अंजी सिंह की कानूनी रूप

से विवाहित पत्नी है। मूल आवेदन के लंबित रहने के दौरान, याचिकाकर्ता को न्यायाधिकरण द्वारा डिस्चार्ज बुक की मूल प्रति प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया था। डिस्चार्ज बुक की प्रति प्रस्तुत करने पर, न्यायाधिकरण द्वारा इसकी जांच की गई और यह पाया गया कि दिवंगत पूर्व सिपाही अंजी सिंह को ग्रेनेडियर्स रेजिमेंटल सेंटर के कमांडेंट के आदेश से 30.09.1963 को 3 साल और 148 दिनों की सेवा के बाद सेना नियम, 1954 के नियम 13(3) की संख्या III (iii) के तहत चिकित्सकीय रूप से सेवा के लिए अयोग्य होने पर सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था। रिकॉर्ड से यह भी स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता के पति ने सेवा पेंशन देने के लिए 15 साल की न्यूनतम अर्हक सेवा पूरी नहीं की थी, इसलिए उन्होंने 10 साल की सेवा भी पूरी नहीं की है, जो कि पेंशन विनियम, 1961 (भाग-1) के नियम 198 के अनुसार अमान्य पेंशन देने के लिए न्यूनतम आवश्यकता है।

यह एक स्वीकृत तथ्य है कि याचिकाकर्ता ने अपने पति की मृत्यु के चार दशक बाद न्यायाधिकरण का दरवाजा खटखटाया और इस देरी को उसके द्वारा ठोस कारण बताकर स्पष्ट नहीं किया गया। हमारा दृढ़ विचार है कि किसी व्यक्ति को अपने अधिकारों को लागू करवाने के लिए या इक्विटी पक्ष में छूट प्राप्त करने के लिए यदि आवश्यक हो तो सिस्टम को चालू करने के लिए सतर्क रहना होगा, लेकिन अगर वह चुप रहता है और चुप्पी बनाए रखता है तो उस पर कोई करवाई नहीं की जनि चाहिए। निवारण के लिए शिकायत समय के भीतर दर्ज की जानी चाहिए और यदि कोई समय नहीं दिया गया है तो भी उचित समय के भीतर दर्ज किया जाना चाहिए। वर्तमान मामले में, माना जाता है कि मूल आवेदन 47 साल बाद दायर किया गया है और उसे ठीक से समझाया नहीं गया है। इस एकमात्र आधार पर याचिकाकर्ता का दावा खारिज किये जाने योग्य है। **सी. जैकब बनाम निदेशक, भूविज्ञान एवं खनन सिंधु और अन्य. : (2008) 10 एससीसी 115** ईएसटी के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विवाद उठाने में देरी के तथ्य पर विचार किया है और निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

> "9. जब एक सरकारी कर्मचारी वैकल्पिक रोजगार लेने या व्यक्तिगत मामलों में भाग लेने के लिए सेवा छोड़ देता है, और छुट्टी या त्यागपत्र या स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के पत्र के लिए कोई पत्र भेजने की जहमत नहीं उठाता है, और रिकॉर्ड यह नहीं दिखाते हैं कि वह है यदि उसे सेवा में माना जाता है, तो वह दो दशकों के बाद यह नहीं कह सकता कि उसे वापस ड्यूटी पर ले लिया जाए। न ही ऐसे कर्मचारी को सेवा में बने रहने के रूप में माना जा सकता है, जिससे पूरी अवधि को पेंशन के उद्देश्य के

लिए अर्हक सेवा माना जाएगा। जहां कोई कर्मचारी अनाधिकृत रूप से अनुपस्थित रहता है और 20 साल बाद अचानक प्रकट होता है और मांग करता है कि उसे वापस लिया जाए और न्यायालय का दरवाजा खटखटाया जाए, तो विभाग के पास स्वाभाविक रूप से उस समय की दूरी पर कर्मचारी से संबंधित कोई रिकॉर्ड नहीं होगा। ऐसे मामलों में, जब नियोक्ता जांच के रिकॉर्ड और बर्खास्तगी/हटाने के आदेश प्रस्तुत करने में विफल रहता है, तो न्यायालय रिकॉर्ड प्रस्तुत नहीं करने के लिए नियोक्ता के खिलाफ प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाल सकती है, न ही 20 वर्षों के लिए पिछले वेतन के साथ बहाली, सेवा की समाप्ति या कर्मचारी की आकर्षक वैकल्पिक रोज़गार का निर्देश दे सकती है। ऐसे मामलों में गलत सहानुभूति अनुशासनहीनता को बढ़ावा देगी, गलती करने वाले कर्मचारी को अन्यायपूर्ण पदोन्नति मिलेगी और इसके परिणामस्वरूप सरकारी खजाने की बर्बादी होगी। कई बार पिछले वेतन के नियमित आदेश के परिणामस्वरूप वित्तीय बोझ की सीमा पर भी ध्यान नहीं दिया जाता है।"

हम **शिबा शंकर महापात्र और अन्य बनाम उड़ीसा राज्य एवं अन्य : (2010) 12 एससीसी 471** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय से अपने दृष्टिकोण को और मजबूत करते हैं। जिसमें यह माना गया था कि किसी व्यक्ति को उचित समय के भीतर अपनी शिकायत उठानी चाहिए और उसे अत्यधिक देरी के बाद अपना दावा उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

"18. आर.एस. मकाशी बनाम आई.एम. मेनन और अन्य 16 एआईआर 1982 एससी 101 में, इस न्यायालय ने कर्मचारियों की पारस्परिक वरिष्ठता के संबंध में रिट याचिका दायर करने में सीमा, देरी और देरी के सभी पहलुओं पर विचार किया। न्यायालय ने इसका उल्लेख किया मध्य प्रदेश राज्य और अन्य बनाम भाईलाल भाई और अन्य, 17 एआईआर 1964 एससी 1006 में यह देखा गया है कि विधानमंडल द्वारा तय की गई अधिकतम अवधि वह समय है जिसके भीतर किसी मुकदमे में राहत मिलती है। इसे आमतौर पर एक उचित मानक माना जा सकता है जिसके द्वारा संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उपाय मांगने में देरी को मापा जा सकता है। न्यायालय ने निम्नानुसार कहा:-

"हमें कानून और समानता, न्याय और अच्छे विवेक के सिद्धांत के अनुसार न्याय करना चाहिए। प्रत्यर्थीगण को उनके द्वारा प्राप्त अधिकारों से वंचित करना अन्याय होगा। प्रत्येक व्यक्ति को बैठकर यह विचार करने का अधिकार होना चाहिए कि बहुत समय पहले की गई उसकी नियुक्ति और पदोन्नति कई वर्ष बीत जाने के बाद रद्द नहीं की जाएगी...

याचिकाकर्तागण ने इसके लिए कोई वैध स्पष्टीकरण प्रस्तुत नहीं किया है, 1968 के सरकारी संकल्प में निर्धारित वरिष्ठता सिद्धांतों के खिलाफ चुनौती के साथ न्यायालय का दरवाजा खटखटाने में उनकी ओर से अत्यधिक देरी... हम तदनुसार मानेंगे कि याचिकाकर्तागण द्वारा सरकारी संकल्प में निर्धारित वरिष्ठता सिद्धांतों के खिलाफ चुनौती दी गई है। 2 मार्च, 1968 को उच्च न्यायालय द्वारा देरी और लापरवाही के आधार पर रिट याचिका को खारिज कर दिया जाना चाहिए था, जहां तक यह उक्त सरकारी प्रस्ताव को रद्द करने की प्रार्थना से संबंधित था, को खारिज कर दिया जाना चाहिए था।"

(महत्व दिया गया)

19. वरिष्ठता सूची को चुनौती देने का मुद्दा, जो लंबे समय तक अस्तित्व में रहा, इस न्यायालय द्वारा के.आर. मुद्गल एवं अन्य बनाम आर.पी. सिंह और अन्य 18 एआईआर 1986 एससी 2086 में फिर से विचार किया गया। न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णय दिया:-

"एक सरकारी कर्मचारी जो किसी भी पद पर नियुक्त किया जाता है, उसे अपनी नियुक्ति के कम से कम 3-4 साल की अवधि के बाद शांतिपूर्वक और बिना किसी असुरक्षा की भावना के अपने पद से जुड़े कर्तव्यों को पूरा करने की अनुमति दी जानी चाहिए.....संतोषजनक सेवा शर्तें बताती हैं कि इस मामले की तरह कई वर्षों के बाद दायर की गई रिट याचिकाओं से सरकारी कर्मचारियों के बीच अनिश्चितता की कोई भावना नहीं होगी। यह आवश्यक है कि जो कोई भी उसे दी गई वरिष्ठता से व्यथित महसूस करता है, उसे यथाशीघ्र न्यायालय का दरवाजा खटखटाना चाहिए अन्यथा सरकारी सेवकों के मन में असुरक्षा की भावना पैदा होने के अलावा, प्रशासनिक जटिलताएँ और कठिनाइयाँ भी होंगी। परिस्थितियों के आधार पर हम मानते हैं कि उच्च न्यायालय ने रिट याचिका पर प्रत्यर्थीगण की ओर से उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति को लापरवाही के आधार पर खारिज करने में गलती की थी।"

(महत्व दिया गया)

20. मामले का निर्णय करते समय, इस न्यायालय ने मैल्कम लॉरेंस सेसिल डिसूजा बनाम भारत संघ और अन्य 19 एआईआर 1975 एससी 1269, में अपने पहले के निर्णय पर भरोसा किया। जिसमें निम्नानुसार देखा गया था:-

"हालांकि, सेवा की सुरक्षा को किसी लोक सेवक की चूक के लिए प्रशासनिक कार्रवाई के खिलाफ ढाल के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है, लेकिन सार्वजनिक सेवा में संतुष्टि और दक्षता की आवश्यक आवश्यकताओं में से एक सुरक्षा की भावना है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसके सभी विभिन्न पहलुओं में ऐसी सुरक्षा की गारंटी देना मुश्किल

है, कम से कम यह सुनिश्चित करना संभव होना चाहिए कि वरिष्ठता सूची में किसी की स्थिति जैसे मामलों को एक बार निपटाने के बाद समय बीतने के बाद दोबारा नहीं खोला जाना चाहिए। कई वर्षों तक उस पार्टी के मामले में जिसने स्वयं हस्तक्षेप करने वाली पार्टी को चुप रहने के लिए चुना है। वरिष्ठता जैसे पुराने मामलों को लंबे समय के बाद उठाने से प्रशासनिक जटिलताएँ और कठिनाइयाँ पैदा होने की संभावना है। इसलिए, सेवा की सुचारुता और दक्षता के हित में यह प्रतीत होगा कि ऐसे मामलों को कुछ समय के अंतराल के बाद बंद कर दिया जाना चाहिए।

(महत्व दिया गया)

21. बी.एस. बाजवा बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य 20 एआईआर 1999 एससी 1510, में इस न्यायालय ने इसी तरह के मुद्दे पर निर्णय लेते समय उसी दृष्टिकोण को दोहराया, जो निम्नानुसार है:-

"यह सुस्थापित है कि सेवा मामलों में, उचित अवधि बीत जाने के बाद ऐसी स्थितियों में वरिष्ठता का प्रश्न दोबारा नहीं उठाया जाना चाहिए क्योंकि इसके परिणामस्वरूप तय स्थिति में गड़बड़ी होगी जो उचित नहीं है। वर्तमान मामले में ऐसी शिकायत करने में अत्यधिक देरी हुई थी। यह अनुच्छेद 226 के तहत हस्तक्षेप को अस्वीकार करने और रिट याचिका को खारिज करने के लिए पर्याप्त था।

(महत्व दिया गया)

22. दयाराम असानंद बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य 21 एआईआर 1984 एससी 850 में, इसी दृष्टिकोण को दोहराते हुए इस न्यायालय ने कहा कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत पूछताछ में 8-9 साल की अत्यधिक देरी के लिए संतोषजनक स्पष्टीकरण के अभाव में, अन्य कर्मचारी को सौंपी गई वरिष्ठता और पदोन्नति की वैधता नहीं हो सकती है।

23. पी.एस. में सदाशिवस्वामी बनाम तमिलनाडु राज्य, 22 एआईआर 1975 एससी 2271 में इस न्यायालय ने उस मामले पर विचार किया जहां पदोन्नति को चुनौती देने के 14 साल बाद याचिका दायर की गई थी। हालाँकि, इस न्यायालय ने माना कि पीड़ित व्यक्ति को राहत के लिए शीघ्रता से न्यायालय का रुख करना चाहिए और पुराना दावा पेश करना स्वीकार्य नहीं है। न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की:-

"किसी कनिष्ठ को अपने ऊपर पदोन्नत करने के आदेश से व्यथित व्यक्ति को ऐसी पदोन्नति के कम से कम 6 महीने या अधिकतम एक वर्ष के भीतर न्यायालय का दरवाजा खटखटाना चाहिए।"

24. न्यायालय ने आगे कहा कि ऐसा नहीं है कि अनुच्छेद 226 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करने के लिए न्यायालयों के लिए कोई सीमा अवधि थी और न ही ऐसा कोई मामला हो सकता है जहां न्यायालय निश्चित अवधि के बाद किसी मामले में हस्तक्षेप नहीं कर सकते। यह

न्यायालयों के लिए अधिकार क्षेत्र का एक अच्छा और बुद्धिमान कृत्य होगा कि वे उन व्यक्तियों के मामले में अनुच्छेद 226 के तहत अपनी असाधारण शक्तियों का प्रयोग करने से इंकार कर दें जो राहत के लिए शीघ्रता से संपर्क नहीं करते हैं और जो स्टैंडबाय करते हैं और मृतप्रायः दावा पेश करते हैं और सुलझे हुए मामलों को अस्थिर करने का प्रयास करते हैं और फिर न्यायालय आते हैं।

25. इसी तरह का दृश्य इस न्यायालय द्वारा श्रीमती सुदामा देवी बनाम आयुक्त एवं अन्य 23 (1983) 2 एससीसी 1; यू.पी. राज्य बनाम राज बहादुर सिंह एवं अन्य 24 (1998) 8 एससीसी 685; और नॉर्दर्न इंडियन ग्लास इंडस्ट्रीज बनाम जसवन्त सिंह और अन्य 25 (2003) एससीसी 335 में दोहराया गया है।

26. दिनकर अन्ना पाटिल और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य 26 एआईआर 1999 एससी 152 में, इस न्यायालय ने माना कि वरिष्ठता को चुनौती देने में देरी और ढिलाई हमेशा घातक होती है, लेकिन यदि पक्ष विलंब के संबंध में न्यायालय को संतुष्ट करता है, तो मामले पर विचार किया जा सकता है।

27. के.ए. में. अब्दुल मजीद बनाम केरल राज्य एवं अन्य 27 (2001) 6 एससीसी 292 में, इस न्यायालय ने माना कि किसी भी कर्मचारी को सौंपी गई वरिष्ठता को सात साल की समाप्ति के बाद इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती कि उसकी प्रारंभिक नियुक्ति अनियमित थी, हालांकि योग्यता के आधार पर भी यह पाया गया कि याचिकाकर्ता की वरिष्ठता उसमें सही ढंग से तय किया गया था।

28. यह स्थापित कानून है कि आदेश के समापन के बाद बाड़ लगाने वालों को विवाद उठाने या आदेश की वैधता को चुनौती देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। कोई भी पक्ष अधिकार के रूप में राहत का दावा नहीं कर सकता क्योंकि राहत देने से इनकार करने का एक आधार यह है कि न्यायालय का दरवाजा खटखटाने वाला व्यक्ति देरी और लापरवाही का दोषी है। सार्वजनिक कानून क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने वाला न्यायालय पुराने दावों को प्रोत्साहित नहीं करता है जहां तीसरे पक्ष का अधिकार अंतराल में क्रिस्टलीकृत हो जाता है। (अफलातून और अन्य बनाम उपराज्यपाल, दिल्ली और अन्य बनाम 28 एआईआर 1974 एससी 2077; मैसूर राज्य बनाम वी.के. कंगन और अन्य, 29 एआईआर 1975 एससी 2190; नगर परिषद, अहमदनगर और अन्य बनाम शाह हैदर बेग के माध्यम से) एवं अन्य, 30 एआईआर 2000 एससी 671; इंदर जीत गुप्ता बनाम भारत संघ एवं अन्य 31 (2001) 6 एससीसी 637; शिव दास बनाम भारत संघ एवं अन्य, 32 एआईआर 2007 एससी 1330; क्षेत्रीय प्रबंधक, ए.पी. एसआरटीसी बनाम एन. सत्यनारायण और अन्य

33 (2008) 1 एससीसी 210; और शहर और औद्योगिक विकास निगम बनाम दोसु आर्देशिर भिवंडीवाला और अन्य 34 (2009) 1 एससीसी 168)।

जहां तक याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा भरोसा किए गए निर्णयों का सवाल है, हमारा विचार है कि वे निर्णय एक अलग तथ्यात्मक मैट्रिक्स में पारित किए गए थे। वर्तमान मामले में, मूल आवेदन लगभग 47 वर्षों की बड़ी देरी से दायर किया गया है और इस तथ्य को दिखाने के लिए कोई दस्तावेज नहीं है कि याचिकाकर्ता दिवंगत पूर्व सिपाही अंजी सिंह की कानूनी रूप से विवाहित पत्नी है। यह भी स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता के पति ने सेवा पेंशन के अनुदान के लिए न्यूनतम अर्हक सेवा पूरी नहीं की है।

उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, हम पाते हैं कि विद्वान न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश में कोई अवैधता या विकृति नहीं है क्योंकि याचिकाकर्ता के मामले पर न्यायाधिकरण द्वारा विस्तार से विचार किया गया था। रिट याचिका बिना योग्यता के है। परिणामतः, रिट याचिका को योग्यता से रहित होने के कारण खारिज कर दिया जाता है।

**(अनिल कुमार उपमन), न्यायमूर्ति (मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव), कार्यवाहक मुख्य न्यायमूर्ति)**

Sudhir Asopa/3

**टिप्पणी:** इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल, द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

**अस्वीकरण:** यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।